अमृत वाणी

आपत्तियाँ मनुष्यता की कसौटी हैं। इन पर खरा उतरे बिना कोई भी व्यक्ति सफल नहीं हो सकता।

-पं.रामप्रताप त्रिपाठी,

एक और हादसा

आंध्रप्रदेश के पूर्वी गोदावरी जिले में विगत शनिवार को उस समय एक बड़ा हादसा हो गया जब यात्रियों से भरी एक नाव जिले के गोमती नदी में पलट गई। जैसा कि बताया जा रहा है कि उस बदकिस्मत नाव में 40 से अधिक लोग सवार थे जिनमें से 10 लोगों को किसी तरह बचा लिया गया जबकि 30 से अधिक लोगों का कोई अता पता नहीं है। तात्पर्य यही कि इन लोगों की जल समाधि की आशंका हादसा के कारणों के बारे में एक ही बात बताई गई है कि बीच नदी में अचानक संतुलन बिगड़ जाने से नाव पलट गई। कहने की जरूरत नहीं कि इस तरह एकाएक संतुलन बिगड़ने का एकमात्र कारण नाव में क्षमता से अधिक यात्रियों का सवार होना ही होता है क्योंकि अधिकतर नाव दुर्घटनाएं इस एक ही वजह से होती है। फिर भी लोग क्यों सीख नहीं लेना चाहते और जान बूझकर अपनी जान को जोखिम में डालते है, यह समझ से बाहर है। बारिश के समय नदियां भरी होती है। उनका बहाव तेज होता है जिसमें नाविक को सावधानी पूर्वक नाव चलानी पड़ती है। उस स्थिति में अगर नाव क्षमता से अधिक भारी हो तो वो संभल कैसे सकती है। नतीजा ऐसे हादसों का होना।

दरअसल यात्रियों में जल्दी पहुंचने की इतनी हड़बड़ी होती है कि वे नाविक के मना करने पर भी जबरन नाव पर सवार हो जाते हैं और उन्हें ले चलने को मजबूर करते है। नाव चालक भी कभी दबाव में आकर तो कभी कुछ लालच के कारण जोखिम उठाने को तैयार हो जाता है। अगर हादसे होते है तो तैरना जानने के कारण नाविक तो अपनी जान बचा लेता है मगर अधिकतर यात्री जान गंवा बैठते है।

दुख की बात यह है कि एक बार नहीं बार-बार ऐसे हादसे होते हैं फिर भी न तो लोग सीख लेते हैं और न संबंधित प्रशासन जागती है जबकि महत्वपूर्ण जल यातायात मार्ग और नाव चलने की जानकारी संबंधित जिला और स्थानीय प्रशासन को भलीभांति होती है। अगर वो चाहें तो जरूरत अनुसार सुरक्षा गार्ड आदि तैनात कर नावों के संचालन पर नियंत्रण रख सकते है। वैसे सबसे बड़ी जरूरत तो लोगों का स्वयं सचेत होना है। अगर वे स्वयं अपनी सुरक्षा का ध्यान नहीं रखेंगे तो कौन रख सकेगा।

लोकतंत्र के राजपरिवार

जितनी तेजी से राजनीतिक दलों में परिवारवाद पांव पसार रहा है, वह दिन दूर नहीं जब शायद कोई आम आदमी चुनाव लड़ सके। देश में बड़ी राष्ट्रीय पार्टियों में एक-दो को छोडकर बाकी सभी एक विशेष परिवार तक सिमट कर रह गई हैं। कहा जाता है की इंसान अपने जन्म से नहीं कर्म से जाना जाता है, ये सब जानते है। आज नेता अपने खानदान से ज्यादा जाने जाते है अपने कर्मो और योग्यता के लिए कम जाने जाते है।

विश्व के लोकतंत्रिक इतिहास में भारत ऐसा देश है, जहां परिवारवाद की जड़ें गहरी धंसी हुई है। अब तो देश का लोकतंत्र परिवारतंत्र में बदल गया है। एक सर्वे के मुताबिक 2009 में 29 फीसदी और 2014 में 21 फीसदी सांसद वंशवाद की राजनीति से आए थे। पिछले लोकसभा चुनाव में उत्तर प्रदेश से समाजवादी पार्टी के पांच जने लोकसभा में पहुंचे। इनमें पांचों के पांचों मुलायम सिंह के वंश से थे यानी सौ फीसदी वंशवाद। सोलहवीं लोकसभा में कांग्रेस के 44 प्रतिनिधि जीतकर आये। इसमें 48 प्रतिशत सांसद वंशवाद से निकलकर आए , यानी इनमें से करीब आधे, रिश्तेदारों की वजह से राजनीति में आए। इसी भांति भाजपा में 15 प्रतिशत सांसद वंशवाद का सहारा लेते हुए संसद में पहुंचे। एक आंकड़ें के मुताबिक संसद में इस समय 36 राजनैतिक दलों के प्रतिनिधि मौजूद हैं जिसमें से 13 राजनैतिक दलों के प्रतिनिधि दरअसल परिवार के सदस्य ही हैं।

भारत के लोकतंत्र को समझने वाले लोगो का एक दृष्टिकोण ये भी है की इस देश में वंशवाद और राजशाही को लोकतंत्र का जामा ओढ़ाया गया है। राजशाही के जमाने में और लोकतंत्र में फर्क सिर्फ इतना है कि तब राजा ही अपने बेटे को उत्तराधिकारी घोषित करता था अब वो जनता से घोषित करवाता है। जवाहरलाल नेहरू से होते हुए इंदिरा गाँधी, संजय गांधी, राजीव गांधी, मेनका गांधी, सोनिया गांधी, प्रियंका गांधी, राहुल गांधी, वरुण गांधी जिस तरह से पारिवारिक सत्ता का फायदा लेते आए हैं वह सब के सामने है। कांग्रेस से लेकर क्षेत्रीय दलों में परिवारवाद की जड़ें काफी मजबूत हो गई हैं। परिवारवाद को लोकतंत्र के लिए कभी अच्छा नहीं समझा गया, लेकिन तथ्य यह है कि कांग्रेस में ही इस प्रवृत्ति की शुरुआत हुई और धीरे-धीरे यह संक्रामक हो गई।

वंशवाद केवल बड़ी राष्ट्रीय पार्टियों में नहीं है, छोटी बड़ी क्षेत्रीय पार्टियों में भी कुछ परिवारों का अच्छा खासा वजूद है । महाराष्ट्र में ठाकरे परिवार का भी हाल राजनीति में कुछ ऐसा हा रहा है। उत्तर प्रदेश में समाजवादी पार्टी के मुलायमसिंह के परिवार के लगभग बीस छोटे बड़े सदस्य कुर्सियों पर विराजमान हैं। पंजाब में अकाली दल के प्रकाशसिंह बादल के एक दर्जन पारिवारिक लोग काबिज हैं। हरियाणा में स्वर्गीय देवीलाल के पुत्र चौटाला और उनके बेटे राजनीति में हैं। कश्मीर में स्व. शेख अब्दुला के बाद उनके बेटे फारूख अब्दुला और उनके भी बेटे उमर अब्दुला है। कश्मीर में ही महबूबा मुफ्ती अपने पिता पूर्व केन्द्रीय गृह मन्त्री की विरासत की मालकिन हैं। हिमांचल के भारतीय जनता पार्टी के मुख्यमंत्री के पुत्र अनुराग ठाकुर राष्ट्रीय युवा मोर्चा संभाल रहे हैं। हरियाणा के दो पूर्व बड़े नेता चौधरी बंशीलाल व भजनलाल के वंशज राजनीति में सक्रिय हैं। बिहार के राजद के बड़े नेता लालू प्रसाद ने अपनी पत्नी राबड़ी देवी को चूल्हे से सीधे मुख्यमन्त्री बनाया था। लालू के दोनों पुत्र उनकी विरासत संभाल रहे है। स्वर्गीय लालबहादुर शास्त्री जी के पुत्र, गोविन्दवल्लभ पन्त के पुत्र-पौत्र, मध्यप्रदेश के शुक्ला बन्धु अपने पिता की विरासत को लंबे समय तक संभालते रहे। चौधरी चरणसिंह के पुत्र एवं पौत्र उनके बताए मार्ग पर चल रहे हैं। मध्यप्रदेश के सिंधिया परिवार की पीढ़ियां राजनीति की अग्रिम पंक्ति में सक्रिय हैं। झारखंड में शिबूसोरेन व उनके बेटे का राजनीतिक दांवपेंच सिर्फ कुर्सी के लिए चलता रहा है। एनसीपी नेता शरद पवार की बेटी राज्यसभा में और भतीजा राज्य में प्रतिनिधित्व कर रहे हैं। इस प्रकार के कई राजनीतिकों के बेटे, भतीजे और भाई अपने बाप या दादा की वसीयत को सम्हाले हुए हैं। शीला दीक्षित, हरीश रावत, यशपाल आर्य, भूपेंद्रसिंह हुड्डा, उत्तर प्रदेश के पूर्व मुख्यमन्त्री कल्याणसिंह, इन सबके बेटे भी इसी राह पर हैं। भारत का लोकतंत्र भी अजब निराला है। मतदाता चाह कर भी जाति और क्षेत्र की राजनीति के भंवर से आजादी के 71 वर्षों के बाद भी निकल नहीं पाए है। लोकतंत्र ने आज पूरी तरह परिवारतंत्र का जामा पहन लिया है। बड़े बड़े आदर्शों की बात करने वाले नेता परिवारमुखी होगये है। देश वंशवाद से कब मुक्त होगा यह बताने वाला कोई नहीं है। भारत में लोकतंत्र 71 साल के सफर में परिवारतंत्र में बदल गया है। इस गंभीर और संक्रामक बीमारी का इलाज केवल देश का मतदाता ही कर सकता है।

भारत की राजनीति में परिवारवाद खत्म होने की बजाय वटवृक्ष की तरह फैलता जा रहा है। वर्तमान में लगभग हर पार्टी परिवारवाद के रोग से ग्रसित है। प्रमुख राजनीतिक पार्टियों का हाल तो यह है,कि पार्टी का अध्यक्ष पद परिवारों की बपौती बना हुआ है। अधिकांश राजनीतिक दलों में एक ही परिवार के सदस्य कब्जा जमाये हुए है। इन दलों में वंशवाद के साथ दागी सियासत भी उफान पर है। कई दल तो लोकतंत्र का जामा पहन कर जाति, संप्रदाय और वर्ग विशेष की राजनीति का सियासी खेल खेल रहे है। इन दलों के पास धन दौलत की कमी नहीं है।

बाल मुकुन्द ओझा
(ये लेखक के अपने विचार है)

भारत विरोधी है महबूबा का बयान

जम्मू कश्मीर की सत्ता जाते हीए महबूबा मुफ्ती के स्वर भी बदलने लगे हैं। उन्होंने अभी हाल ही में कहा है कि उनकी पार्टी को तोडने के प्रयास किए गए तो कश्मीर में 1990 जैसे हालात बन जाएंगेए इस बयान से ऐसा ही लगता है कि जैसे 1990 के हालात के लिए पीडीपी ही जिम्मेदार हैए वह जानती है कि ऐसे हालात कैसे बनाए जाते हैं। मेहबूबा मुफ्ती का आतंकवादियों के प्रति उनका नरम रवैया किसी से छिपा नहीं रहा है। अब तो उन्होंने आतंकी पैदा करने की धमकी देकर अपने अंदर आतंकियों व पाकिस्तान के प्रति छिपे प्रेम को सरेआम उजागर कर दिया है। उन्होंने यह कहकर आतंकियों की पैरवी की है कि यदि उनकी पार्टी में तोडफ़ोड़ की गई तो सलाउद्दीन व यासिन मलिक जैसे आतंकवादी पैदा होंगे। आतंकी पैदा करने की बात करके महबूबा मुफ्ती देश को क्या संदेश देना चाहती हैं। महबूबा मुफ्ती को यह समझना चाहिए कि उनकी पार्टी के अंदर जो भी चल रहा हैए वह उन्हीं के कर्मो का फल है। वह खुद तो अपना घर संभाल नहीं पा रही है और दूसरों पर इसका दोषारोपण मढ़ कर अपनी नाकामियों को छिपाने में लगी हुई है। पीडीपी की वास्तविकता यह है कि यह पार्टी केवल एक परिवार की पार्टी बनकर रह गई है। इसमें आम कार्यकर्ताओं के बारे में सौतेला जैसा व्यवहार किया जाता है। चाहे पार्टी में कोई पद देने की बात हो या फिर सत्ता की मलाई खाने की बात होए महबूबा ने दोनों में अपने परिवार के लोगों को महत्व दिया। ऐसे में पार्टी में बगावत होना एक स्वाभाविक प्रक्रिया है। इसका भाजपा पर दोष मढऩा किसी भी दृष्टि से ठीक नहीं कहा जा सकता। इसी प्रकार जम्मू कश्मीर में दूसरी पार्टी नेशनल कांफ्रेंस की बात की जाए तो कमोवेश उसके हालात भी लगभग पीडीपी जैसे ही हैंए उसके नेता भी केवल अपने परिवार पर केन्द्रित करके पूरी पार्टी का संचालन करते दिखाई देते हैं। इन्होंने भी अपने बयानों के माध्यम से अलगाववदी नेताओं का समर्थन करने जैसे बयान दिए हैं।

जम्मू कश्मीर में चुनाव के बाद जब पीडीपी के साथ भाजपा ने गठबंधन कर सरकार बनाईए तब महबूबा को भाजपा ने कश्मीर की जनता के हितों को ध्यान में रखकर उसका समर्थन कियाए लेकिन महबूबा का रवैया नहीं बदला। महबूबा मुफ्ती ने कश्मीरी हिन्दुओं को घाटी में बसाने के लिए भी कोई कदम नहीं उठाए। भारतीय जनता पार्टी का कश्मीरी हिन्दुओं के बारे में प्रारंभ से ही यह उद्देश्य रहा है कि कैसे भी करके उनकी वापसी के बारे में सोचा जाएए लेकिन महबूबा शुरु से ही इस तिकड़म में लगी रहीं कि विस्थापित कश्मीरी पंडितों का मुद्दा ही न उठ पाए। उल्लेखनीय है कि कश्मीर में अलगाववादी आतंकियों के बढ़ते प्रभाव और उन्हें मिले राजनीतिक संरक्षण के चलते कश्मीरी हिन्दुओं को वहां से विस्थापित होना पड़ा।

भाजपा ने समर्थन वापस लिया तो यह कदम न्याय संगत ही कहा जाना चाहिए। लेकिन अब महबूबा ने अपना असली रुप दिखा दिया हैए उनका भाजपा के प्रति दोस्ताना रवैया कमए आतंकियों के प्रति उदारता ज्यादा दिखाई। इससे जम्मू कश्मीर के हालात और बिगड़ते जा रहे हैं।

उधरए केंद्र सरकार ने विकास के लिए जो पैकेज दिए उसे भी जम्मू कश्मीर की जनता की भलाई के लिए नहीं लगाया गया। वह केवल आतंकियों को सुरक्षित करने वाले एजेंडा पर ही काम करती हुई दिखाई दे रही थीं। कश्मीर में सेना पर हमला करने वाले पत्थरबाजों को बच्चा कहकर उन्हें माफ किया गया। एक तरह से कानून व्यवस्था पूरी तरह से चरमरा गई थी। अब कह सकते हैं कि जब से पूरा देश इस बात का गवाह है कि महबूबा मुफ्ती के मुख्यमंत्रित्व वाले कार्यकाल में किस तरह से रमजान के दिनों में आंतकवादियों और पत्थरबाजों ने वहां तांडव किया। बेगुनाह लोगों का कत्ल किया गयाए पत्रकारों की हत्या हुई। इसे या तो राज्य सरकार की नाकामी कहा जा सकता है या आतंकियों को ऐसा करने के लिए राजनीतिक संरक्षण माना जा सकता है। यह बात सही है कि महबूबा की सरकार ने आतंकियों के विरोध में वैसे कदम नहीं उठाए जैसे उठाने चाहिए। यानी उनकी सरकार का आतंकियों के बारे में हमेशा नरम रवैया ही रहा। अपनी जिम्मेदारी का ठीक से निर्वहन नहीं करना ही सरकार की बहुत बड़ी विफलता ही थाए ऐसे में वहां राज्यपाल शासन लागू हुआ है तब से हालातों में सुधार हैं। सारे पत्थरबाज किसी गुफा में छिप गए हैं। खूंखार आतंकवादी मारे जा रहे हैं। कई आतंकवादी जंगलों में छिप गए हैं। ऐसे में जिन राजनीतिक दलों का आतंकियों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष समर्थन मिलता रहा हैए उन्हें अब दर्द तो होगा ही। अब आतंकियों को किसी भी प्रकार का सरकारी संरक्षण नहीं मिल रहाए इसलिए महबूबा ने और आतंकी पैदा करने की बात कही है।

कश्मीर में राज्यपाल शासन लगने के बाद अब जब कश्मीर में शांति व्यवस्था कायम होने लगी हैए आतंकवादियों का सफाया हो रहा है और इस सैन्य कार्रवाई से पाकिस्तान भी घबराया हुआ हैए तब ऐसे में महबूबा मुफ्ती का बयान निश्चित ही जम्मू कश्मीर के वातावरण में जहर घोलने जैसा है। उनके इस बयान से जाहिर होता है कि वह जम्मू कश्मीर में शांति नहीं चाहती है। वे जिस सलाहुद्दीन व यासीन मलिक जैसे आर्तकियों के पैदा करने की धमकी दे रही हैंए उनका इतिहास किसी से छिपा नहीं है। इन दोनों ने ही अलग अलग आतंकवादी संगठन बनाकर देश को नुकसान ही पहुंचाया। सैयद सलाहुद्दीन हिजबुल मुजाहिदीन का सरगना है। उसने 1990 में अपना नाम यूसुफशाह से बदलकर सैयद सलाहुद्दीन कर लिया था। सलाहुद्दीन ने 1987 में विधानसभा चुनाव लड़ाए लेकिन हार गया। उसी के बाद से उसने हाथों में बंदूक थाम ली। वहींए यासीन मलिक जम्मू.कश्मीर लिबरेशन फ्रंट ;जेकेएलएफद्ध का प्रमुख है। वह कश्मीर को भारत से अलग करने की वकालत करता रहा है। कश्मीर में शांति से रहने वालों का खून बहाने में इन दोनों ने ही कोई कसर नहीं छोड़ी। अब तो सलाहुद्दीन को अमेरिका द्वारा अंतरराष्ट्रीय आतंकी भी घोषित किया जा चुका है।

पीडीपी में जिस प्रकार के बगावत के सुर बढ़ रहे हैंए उसके मूल में महबूबा की नीतियां ही जिम्मेदार हैं। यह विद्रोही स्वर सरकार जाने के बाद से सुनाई दे रहे हैंए ऐसी बात नहीं हैए लेकिन महबूबा पार्टी के घमासान को जिस प्रकार से मोड़ देने का प्रयास कर रही हैंए उससे ऐसा ही लगता है कि वर्तमान में वह बौखला रही हैं। हम जानते हैं कि जब भाजपा के साथ यहां सरकार थीए तब भी पीडीपी में बगावत के सुर सुनाई देते रहे हैं। अलबत्ता अब इतना जरूर हुआ कि भाजपा से समर्थन वापस लेने के बाद पीडीपी के असंतुष्ट विधायक खुल कर महबूबा के खिलाफआ गए हैं और महबूबा इसका ठीकरा वह भाजपा पर फोड़कर अपना दामन बचाना चाहती हैं।

सुरेश हिन्दुस्थानी
(ये लेखक के अपने विचार है)

राजकाज

शाह के दरबार में नीतिश की हाजिरी

राष्ट्रीय जनता दल के वरिष्ठ नेता और पूर्व सांसद शिवानंद तिवारी ने बिहार के मुख्यमंत्री नीतिश कुमार पर व्यंग्य करते हुए कहा है कि पटना में नीतिश कुमार ने शाह के दरबार में हाजिरी लगाने का काम किया। इस कथन में गूढ़ अर्थ छिपा है, जिसे राजनीतिक धुरंधरों के साथ ही साथ वो लोग जानते ही जानते होंगे जिन्होंने पूर्व विधानसभा चुनाव के दौरान नेताओं द्वारा दिए गए बयानों को याद रखने का काम किया है। अब यह नहीं कहा जा सकता है कि चूंकि पटना में अमित शाह और नीतिश की मुलाकात हुई है तो विरोधी कुछ न कुछ तो कहेंगे ही, इसलिए सोशल मीडिया में शिवानंद कह रहे हैं कि शाह घाघ खिलाड़ी हैं, इसलिए नहीं लगता कि वे अपने बॉस का अपमान भूल गए होंगे। बात साफहै कि इस मुलाकात के जरिए अपमान तो हुआ है अब तय यह करना है कि आखिर किसका अपमान हुआ, क्योंकि दरबार तो शाह का लगा था और हाजिरी लगाने वाले खुद नीतिश कुमार थे।

जम्मू में सियासी जमावट

जम्मू.कश्मीर में एक बार फिर सियासी जमावट होने के संकेत मिल रहे हैं। दरअसल पीडीपी ने अब कांग्रेस से हाथ मिलाकर सरकार बनाने की पहल की है। इसके लिए नई दिल्ली में बैठक हुई और पूर्व प्रधानमंत्री मनमोहन सिंह की अगुवाई में कांग्रेस और पीडीपी नेताओं के बीच बातचीत भी हुई। चूंकि इस दौरान पूर्व मुख्यमंत्री महबूबा मुफ्ती भी दिल्ली में मौजूद रहीं इसलिए कयासों का बाजार गर्म हो गया कि पीडीपी कांग्रेस के साथ मिलकर सरकार बनाने जा रही है। इससे हटकर कांग्रेस नेता अंबिका सोनी का कहना है कि राज्य में जल्द से जल्द चुनाव कराने की मांग हमने की है। मतलब जम्मू में सियासी जमावट साफ देखने को मिल रही है, लेकिन यह चुनाव की है या सरकार बनाने की इस बात का खुलासा समय आने पर ही होगा। फिलहाल राज्य में राज्यपाल शासन लागू है।

आखिर नन्हीं नेनो का दोष क्या है

बात साल-दो साल पुरानी है। मैं अपने एक पुराने मित्र से मिलने गया था। वह कुछ तनाव में दिखे। कुरेदने पर बताया कि उनकी मार्डर्न पुत्रवधु ने अपने लिए अलग कार की फरमाइश की है। पुत्रवधु को ब्यूटीपार्लर, शापिंग या फिर सहेलियों से मिलने जाना होता है। चूंकि पुत्रवधु को शहर में ही उपयोग के लिए कार की जरूरत थी अतरू कहा गया कि टाटा नेनो ले देते हैं। लेकिन, वह नेनो के नाम से बिदक पड़ीं। पुत्रवधु का कहना था कि हुण्डई या मारूति की कोई सिडान चाहिए। मित्र ने बताया कि बहूरानी नेनो को सस्ती कार बताकर इसे अपने स्टेट्स के अनुरूप नहीं मान रही हैं। उच्च मध्यम वर्गीय परिवार वाले अपने मित्र की व्यथा सुनकर मुझे उस सवाल का जवाब मिल गया जो टाटा नेनो को लेकर पिछले समय से मन में उठ रहा था। धुंध साफहो गई। मैं अब समझ पाया कि टाटा समूह का एक बेहतरीन प्रयास भारत में ही क्यों सफलता नहीं हो सका।

टाटा नेनो के साथ जुड़ी विडम्बना देखिए, आए दिन डिस्काउंट, रिबेट और छूट के लिए दबाव डालने वाले हम लोग कार के मामले में अलग नजरिया रखते है। यहां सस्ती का अर्थ घटिया, स्तरहीन, अविश्वसनीय और कमजोर मान लिया जाता है।

अखबार के पहले पन्ने के एक कोने पर सिंगल कॉलम खबर छपी थी। मान कर चलें कि बहुत से पाठकों की नजर ही उस खबर पर न पड़ी हो। जिन लोगों ने खबर पढ़ी होगी, उनमें से 90 फीसदी के मन में खबर पर किसी प्रकार की प्रतिक्रिया न आई हो। शेष 10 फीसदी में से आधे अधिक लोगों में ही अस्तित्व बचा, रखने जूझ रही टाटा नेनो के प्रति सहानुभूति अवश्य उमड़ी हो। खबर में कहा गया है कि सन् 2008 में लॉन्च हुई नेनो पर संकट के बादल दिख रहे हैं। जून माह में केवल एक नेनो कार का उत्पादन हुआ है। गत माह एक भी नेनो का निर्यात नही किया गया। अपने लॉच से पहले ही सारी दुनिया में आकर्षण का केन्द्र बन गई रतन टाटा की ड्रीम कार.नेनो की मांग गायब हो जाने पर आश्चर्य है। टाटा मोटर्स ने कहा है कि नेनो का उत्पादन बंद करने के बारे में अभी कोई फैसला नहीं हुआ है। आटोमोबाइल क्षेत्र के विशेषज्ञों का मानना है कि टाटा मोटर्स के सामने सीमित विकल्प हैं। जैसे, नेनो का उत्पादन बंद करने की घोषणा कर दे अथवा कोई बड़ा बदलाव लाकर नेनो की रीलॉचिंग का निर्णय ले। यह भी संभव है कि अगले कुछ वर्षों तक टाटा मोटर्स मांग पर ही नेनो सप्लाई का निर्णय ले सकती है। खास नेनो के लिए बनाए गए गुजरात के साणंद प्लांट में अब टाटा मोटर्स अपने अन्य नए मॉडलों का उत्पादन करने लगी है।

अपने आगमन से पहले नेनो ने दुनियाभर का ध्यान जिस तरह अपनी ओर खींचा, वह अभूतपूर्व था। बड़े.बड़े कार निर्माता हैरान थे कि मात्र एक लाख रुपये में कार दे पाना कैसे संभव हैघ् नेनो की बुकिंग के लिए उमड़ी भीड़ मोटर साइकिल और कार बाजार के उन दिग्गजों की नींद उड़ा देने वाली थी जिन्हें नेनो से खतरा महसूस हो रहा था। लेकिन नेनो का जादू जिस तेजी से टूटा वह आश्चर्यजनक रहा। इसके लिए अनेक कारणों को जिम्मेदार माना जा रहा है। मसलन, पश्चिम बंगाल के सिंगूर में नेनो प्लांट के खिलाफ तृणमूल कांगेस जैसे राजनीतिक दलों की मोर्चाबंदी और विरोध के चलते प्लांट को गुजरात के साणंद में स्थानांतरित किए जाने से उत्पादन कार्यक्रम खड़खड़ा गया। इससे एक लाख नेनो कार की आपूर्ति का कार्यक्रम 22 सप्ताह के विलम्ब से शुरू हो सका। समय रहते आपूर्ति नहीं हो पाने से प्रतिद्वद्वियों और विघ्न संतोषी तत्वों को पर्दे के पीछे से नेनो के विरूद्ध नकारात्मक प्रचार का मौका मिल गया। यह प्रचारित किया गया कि एक लाख रुपये में कार के नाम से चार पहियाके वाला आटो रिक्शा दिया जा रहा है। नेनो खरीदने का मन बना रहे लोगों को उनके आसपास लोग हतोत्साहित करते रहे। यह टिप्पणी आम हो चली थी कि इससे अच्छा तो मोटर साइकिल अथवा सेकेण्ड हैंड आल्टो या मारूति 800 ली जा सकती है। आपूर्ति शुरू होने के कुछ माह के अंदर दो.तीन नेनो कारों में आग लगने की घटनाओं ने रही.सही कसर पूरी कर दी। एक आटोमोबाइल विशेषज्ञ का कहना है कि नेनो एक खामीरहित उत्पाद है। लगभग तीन लाख नेनो कारों में से मात्र तीन कारों में आग लगने से उसे खारिज नहीं किया जाना था। उधर, इस दुष्प्रचार को भी बल मिला कि कीमत कम रखने के लिए नेनो में सस्ते, घटिया और चीनी पुर्जे लगाए जा रहे हैं। दुष्प्रचार का जवाब देने में टाटा मोटर्स की मार्केटिंग पूरी तरह से नाकाम रही। आटोमोबाइल सेक्टर के दिग्गज मानते हैं कि दो.तीन नेनो कारों में आग लगने की घटनाओं को लेकर शुरू हुए नकारात्मक प्रचार का समय रहते सटीक जवाब देकर खरीददारों का विश्वास बनाए रखा जाना था। आखिर, टाटा समूह के प्रति भारत में गहरा भरोसा देखा जाता है। नेनो के नाकाम होने पर मोटिवेशनल स्पीकर डाण् विवेक बिन्द्रा ने बड़ा सटीक और तथ्यपूर्ण विश्लेषण प्रस्तुत किया है। वह कहते हैं कि मीडिया ने नेनो के आगमन से पहले ही उसे वर्ल्ड्स चीपेस्ट कार की जो टैग लाइन दे दी वही नेनो के लिए मुसीबत बन गई। यहां चीपेस्ट शब्द का उपयोग स्सती यानी कम कीमत की बताने के लिए किया गया होगा। नेनो के मामले में चीपेस्ट से संदेश गया कि यह एक घटिया और अविश्वसनीय कार है। नेनो के मौजूदा मालिकों से बात कीजिए। उनमें से अधिकांश इसके प्रदर्शन से काफी संतुष्ट नजर आते हैं। कई लोगों ने माना कि नेनो पर रख.रखाव का खर्च न के बराबर है। कुछ नेनो कार मालिकों सवाल किया कि आपको दो लाख से भी कम कीमत पर कार चाहिए फिर उससे अपेक्षा बीस.तीस लाख रुपये वाली कार जैसी करना कहां तक सही हो सकता हैघ् कम कीमत पर यह एक अच्छी कार है। टाटा मोटर्स ने इतनी कम कीमत पर काफी कुछ दे दिया। डाण् बिन्द्रा आगे कहते हैं कि नेनो को बाजार में उतारते समय ध्यान छोटे मझौले शहरों के साथ ग्रामीण इलाकों टारगेट बाजार के रूप में रखा गया था। लेकिन विपणन रणनीतिकार भूल गए कि नेनो की क्षमता और डिजायन छोटे परिवारों और शहरी सड़कों के लिए उपयुक्त है। आमतौर पर ग्रामीण परिवार बड़े होते हैं। वहां सड़कें भी ठीक नहीं रहतीं। नेनो अपनी कद.काठी के चलते ग्रामीण क्षेत्रों में सम्भावित खरीदारों की आवश्यकता के अनुरूप नहीं मानी गई। नतीजा यह रहा कि नेनो ग्रामीण क्षेत्रों के ग्राहकों का विश्वास नहीं जीत सकी।

मीडिया की कृपा से चिपकी चीपेस्ट टैगलाइन के कारण भी इसे काफी नुकसान हुआ। कहा जाता है कि ब्रिटिश काल से ही एक हीनभावना शहरी आबादी में अक्सर देखी जाती रही है। यहां हैसियत का सच्चा.झूठा दिखावा बहुत आम बात है। पश्चिमी दुनिया में कार को किसी के स्टेट्स से जोड़ कर नहीं देखा जाता है। हमारे यहां सोच इससे भिन्न देखी जाती है। किसी के कपड़ों और कार से उसकी हैसियत आंकी जाती है। हमारे यहां कार खरीदते समय जरूरत से ज्यादा स्टेट्स दिखावे की मानसिकता का दबाव होता है। ऐसा लग रहा है कि इसी दबाव ने कार के सम्भावित ग्राहकों को नेनो से दूर रखने में अहम भूमिका निभाई है। बहरहाल, टाटा नेनो के भविष्य को लेकर जल्द ही कोई निर्णय लिए जाने की आशा बाजार में की जा रही है। दो माह पहले एक मीडिया रिपोर्ट में कहा गया था कि मांग कम हो जाने से डीलर्स ने नेनो के लिए आर्डर देना बंद कर दिया है।

अनिल बिहारी
(ये लेखक के अपने विचार है)